JETIR.ORG ISSN: 2349-5162 | ESTD Year : 2014 | Monthly Issue
JOURNAL OF EMERGING TECHNOLOGIES AND INNOVATIVE RESEARCH (JETIR)
An International Scholarly Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

कालिदास के साहित्य में सम्पत्ति का अधिकार

डॉ0 शक्ति पाण्डेय

कीवर्ड– रघुवंश महाकाव्य में सम्पत्ति का अधिकार, कालिदास के महाकाव्य में सम्पत्ति के अधिकार

'रघुवंश' महाकाव्य कालिदस की उत्कृष्ठ रचना है। यह उन्नीस सर्गों में विभक्त है। परवर्ती कवियों के लिए यह मकूल है। रघुवंश में समाज में समाज में व्याप्त 'सम्पत्ति के अधिकार' का विस्तृत विवरण मिलता है। रघुवंशम में स्थान–स्थान पर सम्पत्ति संबंधी जो उद्धरण मिलते हैं, वह यह सिद्ध करते हैं कि समाज में सम्पत्ति का चलन वर्तमान समय में व्याप्त अवधारणा का ही सरोकार है। रघुवंश के 'प्रथम सर्ग' में वर्णन है, कि राजा दिलीप अपनी रक्षा करते थे, अरोग्य रहकर धर्म करते थे, लोभरहित होकर धनार्जन करते थे, आसक्ति रहित होकर सुख का अनुभव करते थे

"जगोपात्मानमत्रस्तो भेजे धर्मनातुरः।

अगृष्नुराददे सोऽर्थमसक्तः सुखमन्वभूत्।।[1]

वर्णित श्लोक में धनार्जन करने से यह स्पष्ट होता है, कि तात्कालिक समाज में अवश्य ही सम्पत्ति का अधिकार रहा होगा। सम्पत्ति के अन्तर्गत ही धन को शामिल किया जाता है। राजा दिलीप द्वारा धनार्जन करना इस तथ्य की ओर संकेत है, कि समाज में सम्पत्ति के अधिकार को मान्यता प्राप्त है कालिदास का साहित्य तत्कालीन समाज का प्रतिनिधित्व करना है और उनके

साहित्य के अध्ययन से यह सिद्ध होता है, कि समाज में सम्पत्ति के अधिकार को पूर्णरूपेण मान्यता थी।

रघुवंशम् में कालिदास ने 'कर' का वर्णन करके सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को और भी दृढ़ कर दिया है। किसी राज्य द्वारा व्यक्तियों या विधिक संस्था से जो अधिभार या धन लिया जाता है, उसे 'कर' कहते हैं। राष्ट्र के अधीन आने वाली विधिक संस्थाएं भी तरह–तरह के कर लगाती है। 'कर' धन (मनी) के रूप में लगाया जाता है। किन्तु यह धन के तुल्य श्रम के रूप में भी लगाया जा सकता है और यह व्यक्ति की व्यक्तिगत सम्पत्ति से सम्बन्धित है। भारत के प्राचीन ऋषि 'कर' के बारे में यह मानते थे कि यही कर संग्रहण प्रणाली आदर्श कही जाती है, जो इस बात की ओर इंगित करती है, कि सम्पत्ति के व्यापक अवधारणा के साथ–साथ सम्पत्ति का अधिकार भी प्रत्येक नागरिक को प्राप्त था। प्रथम सर्ग में कविवर कालिदास ने लिखा है कि –प्रजा के कल्याण के लिए ही राजा दिलीप 'कर' लेते थे जैसे सूर्य हजार गुना जल बरसाने के लिए (पृथ्वी से) रस खींचते हैं–

"प्रजानामेव भूत्यर्थ स ताथ्यो बलिमग्रहीत्।
सहस्त्रगुमुस्वष्डुमदत्ते हिं रसं रविः।।[2]

स्पष्टतः संग्रह प्रणाली 'सम्पत्ति' के अधिकार तथा सम्पत्ति के विकास का विशिष्ट उद्धरण है। 'रघुवंशम्' में बहुमूल्य वस्तुओं का वर्णन यत्र–तत्र प्राप्त होता है। सम्पत्ति के अर्थ के अन्तर्गत बहुमूल्य वस्तुओं का भी समावेशन है। सम्पत्ति के अर्थ में प्रयुक्त होने वाली वस्तु में स्थायित्व का तथा भौतिक एकत्व का गुण होना आवश्यक है। इकाईयों के एक संग्रह को जिसकी इकाईयाँ स्वयं पृथक वस्तु हों। समय के साथ–साथ 'स्वत्व' का विकास हुआ और धीरे–धीरे इसका आशय किसी वस्तु का स्वतंत्र उपयोग और उसे बेचने या दे डालने का अधिकार समझा जाने लगा। रघुवंशम् में महाकवि ने इसी अवधारणा के विकास पर प्रकाश डाला है। उपहार, हीरे, मोती इत्यादि भौतिक

सम्पत्ति का वर्णन प्राप्त होता है। रघुकार ने लिखा है, कि पाण्डयदेश के राजाओं ने ताम्रपर्णी नदी से संयुक्त महासागर के उत्तम मोती, अपने संचित यश के समान रघु को उपहार में दिया–

"ताम्रपर्णीसमेतस्य मुक्तासारं महोदधेः।

ते निपत्य दुदुस्तस्मै यशः स्वमिव सञ्चित्।।[3]

इसी क्रम में पशुधन हाथी, घोडा इत्यादि का वर्णन सम्पत्ति के रूप में वर्णित है। रघुवंशम् में व्याख्यायित है कि कामरूप देश के राजा ने इन्द्र से भी अधिक पराक्रमी उस रघु की मदस्त्रापी हाथियों की भेंट से सेवा की, जिनसे अन्य आक्रमणकारियों को रोका था–

"तमीशः कामरूपाणामत्यखण्डलविक्रम्।

भेजे भिन्नकटैनर्नागैरन्यानुपरूरोथयैः।।[4]

घोड़े, हांथी इत्यादि पशु–धन या सम्पत्ति के वर्णन के क्रम में रघुवंशम में सैकड़ों ऊँटों, खच्चरों का वर्णन किया गया है, और यहाँ तक की उन खच्चरों और ऊँटों से धन को पहुंचाने का प्रसंग प्राप्त होता है–

"अथोष्ट्रवामीशतवाहितार्थं प्रजेश्वरं प्रीतमना महर्षिः।

स्पृशान्करेणानतपूर्वकायं सम्प्रस्थितो वाचमुवाच कौत्सः।।[5]

अर्थात् कौत्स ऋषि प्रस्थान करते हुए सैकड़ों ऊँटों, खच्चरों से धन को पहुँचा देने का यत्न करने वाले मस्तक झुकाये हुए रघु पर हांथ फेरते हुए बोले इस प्रकार कालिदास ने अपने साहित्य में स्थान–स्थान पर पशुधन का सम्पत्ति के रूप में वर्णन किया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि सम्पत्ति के रूप में वस्तु किसी के अधिकार क्षेत्र में हो बेची या दी जा सकती है का वर्णन कालिदास के साहित्य में प्रबल रूप से वर्णित है, जो यह सिद्ध करता है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति का अधिकार भी तत्कालीन समाज में था और उसका प्रयोग प्रत्येक वर्ग के द्वारा किया जाता रहा है।

प्राचीन काल से ही गुरू–शिष्य की परम्परा भारतीय संस्कृति की जड़ों में निवास करती है। जिसका स्वरूप वर्तमान में अवश्य परिवर्तित हुआ है परन्तु परम्परा वही है। गुरूदक्षिणा के द्वारा यह प्रमाणित होता है कि दक्षिणा देने वाला सम्पत्ति का अधिकार रखता होगा और दक्षिणा प्राप्त करने वाला उसका अधिकारी होगा। अतः सम्पत्ति का अधिकार दोनों वर्ग को है। उसका वर्णन रघुवंशम् में भी प्राप्त होता है जहाँ प्रत्येक वंश की परम्परा में गुरूदक्षिणा का प्रसंग वर्णित किया गया है। इसके माध्यम से सम्पत्ति का अधिकार समाज में सुनिश्चित होता है। रघुकार ने 'चतुर्थ' और 'पंचम' सर्ग में प्रतिबिम्बित किया है, कि रघु ने दक्षिणा के रूप में सर्वस्व दे दिया, उसी क्रम में लिखा कि विश्वजीत यज्ञ की दक्षिणा में सर्वस्व समर्पण कर देने के बाद महर्षि वरतन्तु के शिष्य कौत्स ऋषि पढ़कर गुरूदक्षिणा के लिए चौदह करोड़ धन लेने की इच्छा से महाराज रघु के पास आये–

"तमथ्वरे विश्वजिति क्षितीशं निःशेषाविश्रार्णितकोशजातम्।
उपात्तविद्यो गुरूदक्षिणाऽर्थी कौत्सः प्रषेदे वरतन्तुशिष्यः।।[6]

इन उद्धरणों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है, कि कविशिरोमणि कालिदास के साहित्य में सम्पत्ति का अधिकार संकीर्णता के भंवर में नहीं था न हि औपचारिक मात्र था। यह तो व्यापक अवधारणा को लिए हुए समाज के प्रत्येक वर्ग में व्याप्त था। सम्पत्ति के व्यापक अर्थ की चर्चा प्रचुरता से रघुकार ने अपने साहित्य में की है। 'समृद्धवान' वैभवशाली, सम्पत्तिवान, समृद्धशाली इत्यादि सम्पत्ति सम्बन्धी अर्थ की चर्चा रघुवंशम में प्राप्त होती है। एक स्थान में वर्णित है कि सुरक्षित एक रथ से समस्त पृथ्वी को विजय करने वाले कुबेर के समान सम्पत्तिशाली धनुर्धारी उस राजा दशरथ ने दुन्दुभि के स्थान को मेघ के समान शब्द **किल तस्य धनुभूत विजयदुन्दुभितां ययुर्रणवा धनरवा नरवाहनसम्पदाः।।**[7] इसी प्रकार रघुवंशम में अनेक उद्धरण वर्णित है जो सम्पत्ति को ओर संकेत करते हैं। जिनसे यह प्रकट होता है कि समाज में सम्पत्ति का महत्व बहुत अधिक था। रघुवंश के सप्तम् सर्ग में कालिदास ने समाज में सम्पत्ति की स्थिति का बड़े अनूठे ढंग से

प्रस्तुत किया है। विदर्भ नरेश भोज ने अपनी छोटी बहन इन्दुमती के विवाह कर देने के बाद अपनी सम्पत्ति के अनुसार दहेज अज को विदा किया

'भर्तापि तात्वत्कथकैशिकानामनुष्टितानन्तरजाविवाहः।

सत्त्वानरूपाहरणीकृत श्रीः प्रास्थापयदाधवमनुवागाच्च।।[8]

बहुत के पार्थिव और अपार्थिव वर्गीकरण तथा वस्तु या अधिकारों के स्वरूप के अनुसार सम्पत्ति का वर्गीरण विभिन्न प्रकार से हुआ है। जैसे पार्थिव या अपार्थिव, चल या अचल तथा वास्तविक, व्यक्तिगत भवन, गृह भूमिखण्ड इत्यादि सम्पत्ति के अचल वर्गीकरण से सम्मिलत है। संस्कृत शब्द 'गृह' अर्थात घर की व्युपत्ति 'ग्रह' शब्द से हुई है जिसका अर्थ है ले लेना, स्वीकार करना, छीन लेना अथवा विजय प्राप्त करना। ''मनु के अनुसार गृह की स्थापना गृहस्थी या परिवार की नींव है। 'गृह' के लिए प्रयुक्त होने वाले लैटिन शब्द 'डोमस' डोमिनियम का मूल्य है। जिसका अर्थ रोमन न्यायशास्त्र में सम्पत्ति के आशय से मानना महत्वपूर्ण है।

इसी प्रकार 'रघुवंशम' में भी गृह, स्वर्ण के राजसिंहासन इत्यादि सम्पत्ति के रूप में वर्णित है। 'एकादश सर्ग' के अन्तर्गत भवन मणि इत्यादि की चर्चा रघुकार करते हैं। विश्वमित्र के साथ जाते हुए राम और लक्ष्मण के सुख का वर्णन करते समय कवि ने वर्णित किया है कि उन्हें ऐसा सुख हो रहा था मानों मणियों से जड़े हुए अपने भ.वनों में अपनी माताओं के आस–पास घूम रहे हो

''मम्लर्तुन मणिकुट्टिमोचितौ मातृपार्श्वपरिवर्तितनाविव।।[9]

भवन, भूमि खण्ड इत्यादि अचल सम्पत्ति के वर्गीकरण में आते हैं। स्वर्ण, चाँदी रत्न इत्यादि सम्पत्ति में शामिल होते हैं रघुवंशम में सम्पत्ति का ऐसा वर्णन प्रतिबिम्बत होता है। एक प्रसंग में राजा दशरथ ने अपना मुकुट उतारकर यज्ञ करते समय तमसा और सरयू के किनारे को सुवर्ण के यज्ञ स्तम्भों से से सुशोभित कर दिया–'

''कनकयूपसमुच्छयशोभिनो वितमसा तमसासयूतहाः।[10]

निष्कर्षतः रघुवंशम में वर्णित तात्कालिक समाज में सम्पत्ति के अर्थ के अन्तर्गत व्यापक अवधारणा व्याप्त थी। समाज के सभी वर्गो पुरूष, स्त्री, बच्चे, वृद्ध सभी का सम्पत्ति सम्बन्धी विवरण दिया गया है। कृषक, श्रमिक सभी के धन प्राप्त करने, धन देने इत्यादि के प्रसंग द्वारा यह प्रमाणित होता है, कि सम्पत्ति का अधिकार तत्कालीन समाज में सभी को था।

1. रघुवंशम, कालीदास व्याख्याकार डॉ0 कृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, सं0 2014, पृ0 8
2. वही प्रथम सर्ग श्लोक सं0 21, पृ0 11
3. वही प्रथम सर्ग श्लोक सं0 18, पृ0 10
4. वही चतुर्थ सर्ग श्लोक सं0 50 पृ0 123
5. वही चतुर्थ सर्ग श्लोक सं0 83, पृ0 135
6. वही पंचम सर्ग श्लोक सं0 14, पृ0 148
7. वही पंचम सर्ग श्लोक सं0 1, पृ0 139
8. वही नवम् सर्ग श्लोक सं0 11, पृ0 281
9. वही सप्तम सर्ग श्लोक सं0 32, पृ0 218
10. भारतीय समाज, पी0एन0 राव, शिवा प्रकाशन इलाहाबाद सं0 2012 पृ0सं0 40